तपेदिक से बचिये

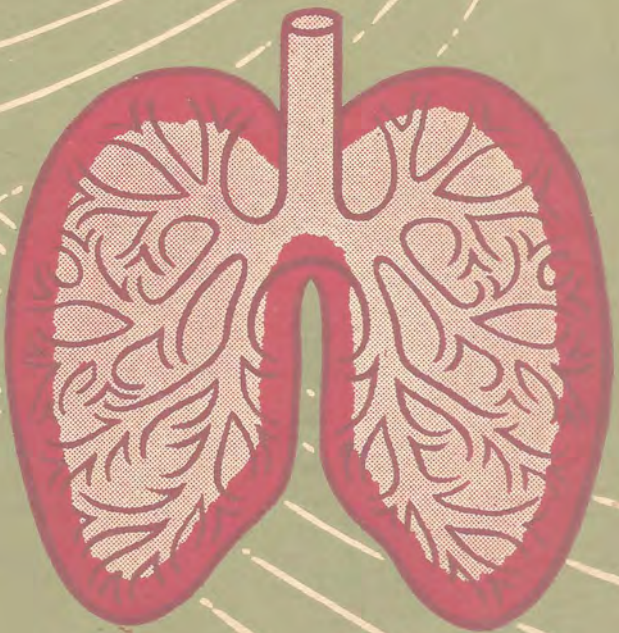

तपेदिक से बचिये

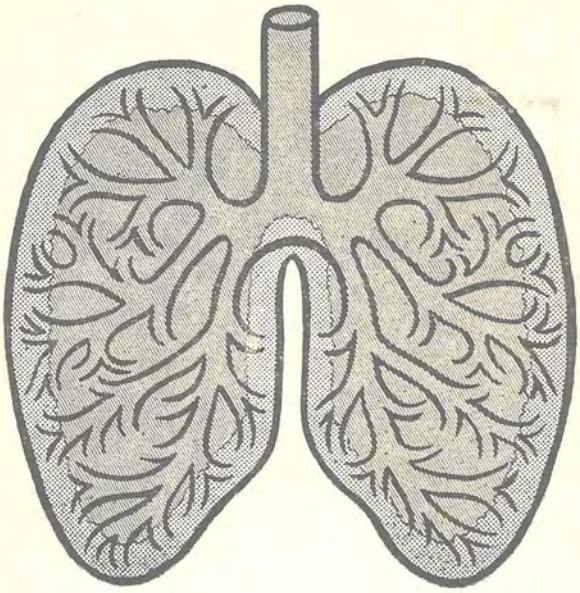

प्रथम संस्करण

नवम्बर

१९५७

१. रोग के लक्षण और कारण
२. रोगी के कर्त्तव्य
३. जनता के कर्त्तव्य
४. इलाज
५. रोग पर विजय

मूल्य

८५ नये पैसे

मुद्रक

इण्डिया प्रिंटर्स, दिल्ली

तपेदिक से बचिये

रोग के लक्षण और कारण

सूबेदार ज्ञानवीरसिंह रमेश का सहारा लिये आती रमा को देखकर भौंचक्के रह गए। रमा का तीन साल पहले का कुन्दन-सा शरीर मिट्टी हो रहा था। आँखें अन्दर धंस गयी थीं। गाल पिचक गए थे। शरीर सूख गया था। सहारा लिए चल रही रमा लड़खड़ा रही थी।

सूबेदार झट से घर से खाट ले आए और बिछाकर बोले—अरे भैया रमेश, रमा को क्या कर दिया? अच्छे कमाने निकले थे। बम्बई क्या करते थे?

रमेश सूबेदार साहिब का मतलब समझ गया। रमा को खाट पर आराम से लिटा कर भरे गले से बोला—दादा, बम्बई कपड़ा-मिल में काम करता था। रमा को बम्बई का पानी रास नहीं आया।

सूबेदार साहिब ने बुद्धुआ को बुला कर रमा के लिए गर्म दूध लाने को कहा। फिर उनकी ओर मुड़ कर बोले—देखो रमेश, एक आध दिन तो यहीं टिक जाओ। ठीक है न रमा? (थकी हुई निढाल पड़ी रमा को भी पूछा।) इस दौरान में अपना घर साफ कर, लिपाई-पुताई कर चले जाना। तीन साल से बन्द घर में बीमार को लिए कैसे घुसोगे? हाँ, सामान अन्दर घर में रख, तुम भी हाथ-मुँह धोकर कुछ खा लो। फिर आराम से बैठकर बातें करेंगे।

रमा और रमेश सूबेदार दादा की बात टाल नहीं सके। क्षणभर एक दूसरे को देखकर, रमेश कुएँ पर चला गया। रमा ने गीली आँखों से दादा को देखते हुए, बुद्धआ से दूध लेकर पी लिया। कुछ जान में जान आई। चेहरे की बेचैनी दूर हुई।

सूबेदार ज्ञानवीर रमा से बोले—क्यों रमा! बम्बई अच्छी नहीं लगी? बम्बई-कलकत्ता तो दुनिया के अच्छे शहरों से मुकाबिला करते हैं। वे आलीशान इमारतें, वे शानदार बाग़-बगीचे, चौड़ी-चौड़ी सड़कों पर दौड़ती नई-नई चमचमाती मोटर-गाड़ियाँ, बसें और ट्रामें। वह दूर तक फैला समुद्र और उसकी उछल-कूद मचाती लहरें। समुद्र की छाती पर शान से तैरते बड़े-बड़े जहाज़।

सूबेदार साहब अपनी लहर में बम्बई की तारीफ करते रमा की ओर मुड़े। उन्होंने देखा कि रमा के चेहरे पर, रमा की आँखों में इन बातों से कोई चमक नहीं आई।

सूबेदार साहब पूछने लगे—रमा कहाँ रहती थी बम्बई में? रमेश भी हाथ-मुंह धोकर आ गया था। सूबेदार ने बुद्धआ को रमेश को भी कुछ खिलाने के लिए कहा और फिर बातों में लग गए। तब तक गाँव के और भी स्त्री-पुरुष अपना-अपना काम निपटाकर, रमा और रमेश को देखने आ बैठे।

सूबेदार ज्ञानवीरसिंह फौज से पेन्शन पा रहे थे। दोनों लड़ाइयों में लड़कर भी सही-सलामत थे और बड़ा अच्छा डील डौल था। माता-पिता और बीबी दूसरे महायुद्ध के समय चल बसे थे। इस समय पास-दूर का भी कोई सम्बन्धी न था। पेन्शन पाकर गाँव में पक्का घर बनवा, मन लगाने को छोटी-सी खेती की देख-भाल करते थे। गाँव वालों की अपने धन और ज्ञान से सेवा

करके जीवन बिता रहे थे। गाँव भर की कोई जरूरत न थी जिसे वह पूरा करने को तैयार न रहते हों। वह गाँव के मुखिया, पंच, प्रतिनिधि, सहायक और सेवक सभी कुछ थे। शाम की चौपाल की बैठकों ने गाँव में बहुत सुधार कर दिये थे। उन्हीं की मेहनत से और गाँव वालों के सहयोग से मदनपुर एक आदर्श गाँव बन चुका था। सूबेदार साहिब सब का विश्वास जीते—दादा, भैया, बाबा, ताऊ सभी कुछ थे।

सूबेदार ज्ञानवीर रमा और रमेश से पूछने लगे—क्यों भैया रमेश, क्या कारण है जो रमा ऐसी सेहत गिराकर लौटी है ? फिर पूछा—रमेश, क्या पाते थे कपड़ा-मिल में ?

रमेश बोला—दादा पचानवे रुपए पर लगा था। इस समय एक सौ पंद्रह पा रहा था।

ज्ञानवीर बोले—तनख्वाह तो बुरी नहीं थी। रहते कहाँ थे ?

रमेश ने उत्तर दिया—दादा इस तनख्वाह से बम्बई जैसे बड़े शहर में क्या बनता है। सभी चीजें महँगी हैं। एक अन-चाही, गन्दी, अन्धेरी-सी खोली में रहना पड़ता था और अठारह रुपए किराए के चले जाते थे।

ज्ञानवीर पूछने लगे—घूमने-घामने नहीं निकलते थे ?

रमेश बोला—कहाँ दादा। सवेरे पौने सात का घर से निकला शाम छै बजे के लगभग थका-टूटा घर लौटता था।

ज्ञानवीर—रमा ! तू खाती-पीती कुछ न थी जो इतनी कमजोर हो गई।

रमा—भूख ही कहाँ लगती थी दादा। गाँव में सारे दिन का काम रहता। और वहाँ थोड़ा-सा काम और फिर पड़े रहना; फिर महँगाई भी थी।

ज्ञानवीर—तो गाँव ही लौट आती।

रमा—दादा, इनका मोह जो था। सवेरे ही भोजन बनाकर, कलेवा खिला इन्हें कौन भेजता? शाम को थके-टूटे जब लौटते तो कौन भोजन खिलाता?

रमेश—दादा, इसे कितना ही समझाया कि कुछ खाया-पिया कर। पर इस ने एक न मानी। इसे एक तो भूख न लगती। फिर अपच रहने लगा। सदा खाँसी-जुकाम दबाए रहता। एक बार ना समझी से ही बीमार हो गई। तबियत गिरी-गिरी रहते-रहते खराब होती गई।

ज्ञानवीर—क्या बाल-बच्चा कोई न हुआ इसे?

रमेश—दादा, एक बार तो कहा न कि बीमार हो गई थी। एक बच्चा हुआ था। वह भी बहुत कमजोर था। डाक्टरी इलाज वगैरह किया गया पर वह बिचारा बच न सका। इससे दुःख न सहा गया। मैं तो काम पर जा मन लगा लेता। दुःख भुला लेता। पर इसे तो रोने-धोने के सिवाय कुछ काम ही न था। ऐसी खाट पकड़ी कि छै महीनों में ही यह हालत हो गई।

ज्ञानवीर—खाँसी भी आती है? बुखार है क्या?

रमेश—जी दादा, मैंने कहा न कि खाँसी-जुकाम तो इसे बम्बई में लगा ही रहता था। बाद में बुखार भी रहने लगा।

ज्ञानवीर—थूक में खून भी आता है?

रमेश—मेरे ख्याल में नहीं। क्यों रमा?

रमा—जी। थूक में खून आता देखा तो नहीं।

ज्ञानवीर—डाक्टर लोग क्या कहते हैं?

रमेश—तपेदिक का शक बताते हैं। मिल के डाक्टर कहते थे

कि इसको गाँव भेज दो। पर यह अकेले आना नहीं चाहती थी। अब तो खोली के पड़ोसी भी नाक-भौं सिकोड़ने लगे थे। मकान मालिक भी डाँट-डपट दिखाकर खोली खाली करने को कहने लगा था। हार कर काम छोड़कर लौट आया हूँ।

ज्ञानवीर—हूँ, अच्छा किया। तपेदिक बड़ा नामुराद बीमारी है। नासमझी के कारण और बीमारी के बड़ी कठिनाई से ठीक होने के कारण बहुत कम लोग इससे स्वस्थ हो पाते हैं।

शहरों का दम-घोटु रहन-सहन, कम जगह में अधिक लोगों का रहना, गरीबी, गन्दगी, अनचाहे काम करने से, अधिक मेहनत का काम और कम खुराक और घटिया खुराक लेने से, धूप और खुली हवा के न मिलने से, किसी दूसरे रोग से बहुत कमज़ोर हो जाने के बाद तथा लगातार जुकाम और खाँसी रहने के कारण इस नामुराद रोग के होने का डर हो जाता है।

तपेदिक का असली कारण एक प्रकार के कीटाणु होते हैं। नासमझी और नादानी से बीमार लोग इन कीटाणुओं को धूल-हवा में थूक कर मिला देते हैं। अक्सर नाक, गले और साँस से फेफड़ों में पहुँचकर ये कीटाणु इस घिनौने रोग को उत्पन्न कर देते हैं। कुछ हद तक खाने-पीने की चीजों से भी ये दुष्ट कीटाणु शरीर में पहुँचकर रोग पैदा करने के कारण बन जाते हैं।

गंगाराम—दादा, तपेदिक के इन कीटाणुओं को हम मार नहीं सकते ?

ज्ञानवीर—चौधरी जी, ये इतने दुष्ट हैं कि इन्हें मारना आसान नहीं।

अच्छा पहले एक कहानी सुनिए। उससे सारी बात समझ में

आ जाएगी। देवताओं और राक्षसों की आपस में कभी बनी नहीं। कभी देवता राक्षसों को दबा लेते, तो कभी राक्षस देवताओं को।

एक राक्षस था रक्तबीज। यों समझो कि उसका जैसा नाम था वैसा ही काम। उसका रक्त बीज का काम करता था। जहाँ रक्त की बूँद गिरती, वहीं उस जैसा एक और राक्षस उत्पन्न हो जाता। यह उसकी खूबी थी। जब देवताओं की तरफ भगवती दुर्गा उससे लड़ाई करने लगी और उस पर तीर चलाए तो हजारों नए राक्षस पैदा हो गए। जहाँ उसके जिस्म से खून की बूँद गिरी कि एक और राक्षस पैदा हो गया।

आखिर दुर्गा ने महाकाली का रूप धरकर रक्तबीज पर हमला किया और अपना मुंह इतना चौड़ा कर लिया कि जितना रक्त बहता, उसको मुंह में लेकर हजम कर जाती। इस प्रकार रक्तबीज और दूसरे राक्षसों का नाश हुआ।

इस कथा के रक्तबीज से तपेदिक अधिक भयानक है। रोगी की हर थूक रक्तबीज की तरह इतनी बीमारी पैदा कर सकती है कि रक्तबीज मामूली जान पड़ता है। दूसरे इस तपेदिक रूपी आजकल के रक्तबीज राक्षस को मारने के लिए कहीं बड़ी दुर्गा रूपी ताकत को बुलाना पड़ेगा। तभी इस तपेदिक रूपी महारोग को जीता जा सकेगा।

गंगाराम—दादा, क्या तपेदिक फेफड़ों का ही रोग है ?

ज्ञानवीर—बात इस प्रकार है चौधरी जी कि फेफड़ों का तपेदिक सौ रोगियों में से पचानवें रोगियों को होता है। लेकिन केवल फेफड़ों में ही तपेदिक नहीं होता। अन्तड़ियों में, हड्डियों में, पुराने न भरने वाले ज़ख्मों में भी हो जाता है।

गंगाराम—दादा अब तो तपेदिक बहुत ही सुनने में आने लगा है।

ज्ञानवीर—ठीक है। कुछ तो शहरी जीवन, घनी आबादी वाली बस्तियों के कारण, कुछ हम लोगों में ठीक समझ न होने के कारण तपेदिक का रोग बढ़ता ही दीख पड़ता है।

रमा और रमेश इन सब बातों को बड़े ध्यान से सुन रहे थे। रमा से पूछे बिना न रहा गया कि क्या अब वह ठीक नहो पाएगी ?

ज्ञानवीर—रमा, तुम्हारा रोग अभी नया ही कहा जाता है। फिर जितनी सावधानी की जाए, जितनी मेहनत की जाए, उतनी ही सफलता मिल जाती है। यदि तुम लोगों को ठीक ज्ञान होता तो इस रोग से अवश्य बचा जा सकता था। घबराने से तो मामूली रोग भी घातक हो जाते हैं।

रमेश और रमा दोनों बोले—यह ज्ञान हम कहाँ से पाएँ दादा ?

ज्ञानवीर—जहाँ तक हो सकेगा मैं सब कुछ बताने की कोशिश करूँगा। सच तो यह है कि मामूली रोग वाले रोगी इसको बेपरवाही से अधिक फैलाते हैं। तुम दोनों को जहाँ रमा के स्वास्थ्य की चाह होनी चाहिए, वहाँ इतना ज्ञान भी अवश्य होना चाहिए कि रमा रोग फैलाने का कारण न बने।

रमा—मैं वायदा करती हूँ कि यदि मुझे ज्ञान करवा दिया जाएगा तो कोई भी ऐसा काम न करूँगी जो कि रोग फैलाने का कारण बने।

रमा की आँखों में एक चमक थी। रमा के और रमेश के चेहरों से ज्ञान की चाह तो प्रकट होती ही थी। साथ में रमा को देखने आए उनके मित्रों की भी यही इच्छा थी कि इस के बारे में ज्यादह से ज्यादह ज्ञान प्राप्त हो। पर रात हो गयी थी। ज्ञानवीर रमा और रमेश की थकावट देख रहे थे।

ज्ञानवीर बोले—तपेदिक के मोटे लक्षण ये हैं :

१. शरीर का बेहद कमज़ोर होना।
२. भूख बन्द। खाने को दिल न करना।

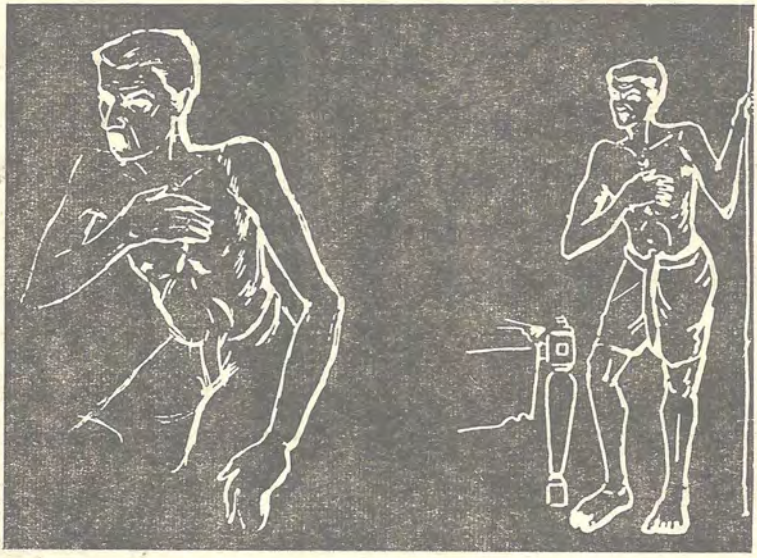

खांसते समय छाती में दर्द

शरीर का कमज़ोर होना

लगातार खाँसी

खाने को दिल न करना

३. लगातार खाँसी। खाँसी में बूदार बलगम आना। कभी खून भी आना।
४. खाँसते समय छाती में दर्द होना।

५. लगातार बुखार रहना।

ऐसा हो तो सावधानी बहुत ज़रूरी है।

अगर तपेदिक के कारण गिनें तो—

१. गन्दे, अन्धेरे, सील और धुएँ वाले घरों में रहना।

२. धूल और धुएँ वाले बड़े-बड़े कारखानों में काम करना।

धुएंदार कारखानों में काम करना

गन्दे मकान

३. कम स्थान में अधिक आदमियों का रहना। घनी और गन्दी बस्तियाँ।

४. गरीबी। ठीक भोजन न मिलना।

५. ताकत से अधिक मेहनत करना।

६. धूप और खुली हवा का न मिलना।

७. किसी भी रोग से बहुत कमज़ोरी होने पर।

८. लगातार खाँसी-ज़ुकाम रहने के कारण।

९. भोग-विलास में जीवन बिताने से।

रोगी के कर्त्तव्य

अगले दिन सूरज छिपने से पहले ही सूबेदार ज्ञानवीरसिंह के आँगन में अच्छी-खासी रौनक थी। रमा एक खाट पर लेटी थी। पास रमेश बैठा था। मिलने वाले स्त्री-पुरुष तीस के लगभग हो गए थे। ज्ञानवीर दिन भर इस बैठक के लिए तैयारी करते रहे थे। यह बात इससे पता चल रही थी कि चौपाल में एक ओर कागज़ पर हाथ से बना एक चार्ट लटक रहा था, जिससे यह एक नज़र में ही पता चल जाता था कि तपेदिक को पैदा करने वाले क्या कारण हैं। सब लोग चार्ट देखकर कल की बात-चीत पर विचार कर रहे थे। रमा का चेहरा आज कुछ प्रसन्न था। ज्ञानवीर जी ने दिन भर किसी मिलने वाले को रमा से मिलने नहीं दिया था। शाम एक पहर रहते ही मिलने वाले रमा को मिल सके थे। आराम, भोजन और खुशी का नतीजा साफ दीख रहा था।

बात रमा ने ही शुरू की।

रमा—दादा, रातभर और आज दिन भर मैं रोग के कारणों

पर विचार करती रही। दादा, आज आप को बताना है कि रोगी के क्या कर्त्तव्य हैं ? रोग फैलने से कैसे रोका जा सकता है।

ज्ञानवीर—हाँ, रमा। और भाइयो आप भी ध्यान से सुनें। क्योंकि जब तक सब का सहयोग न हो, किसी भी ऐसे रोग की रोक-थाम नहीं हो सकती।

गंगाराम—यह तो दादा, हम लोग अच्छी तरह जान ही चुके हैं। पिछली बार जब इधर-उधर के गाँवों में हैज़ा फैला था तो आपकी मेहनत और हमारे कर्त्तव्य से न डिगने से हमारा गाँव तो हैज़े से बचा ही रहा; हम दूसरों की भी सहायता कर सके थे।

पार्वती—क्यों नहीं दादा, गाँव वालों की सहायता से ही तो मेरा ममेरा भाई इस रोग से रोगी होकर भी बच गया था। आप तो हम सब का भला सोचते हैं। इतनी मेहनत करते हैं। फिर हम ध्यान क्यों न देंगे।

ज्ञानवीर—तो लीजिए; पहले जो भाई-बहिन कल नहीं आए थे, वे जान लें कि कल हमने तपेदिक के लक्षणों और कारणों को समझा था।

ज्ञानवीर—तो पहले रोगी के कर्त्तव्यों पर विचार करें। रमा, तुमने जान ही लिया कि यह रोग एक दुष्ट कीटाणु का पैदा किया हुआ है।

रमा—हाँ, दादा जी।

ज्ञानवीर—और तुम्हारे शरीर में इस समय करोड़ों कीटाणु हैं। जानती हो कहाँ हैं ?

रमा—यह नहीं जानती। दादा, क्या चमड़ी पर, जैसे जूएँ होती हैं ?

ज्ञानवीर—ना, ना। ये खाल-वाल पर नहीं होते। और जूओं से बहुत ही अधिक छोटे होते हैं। हम आँख से, बिना औज़ारों की सहायता के इन्हें नहीं देख सकते।

गंगाराम—दादा, आतशी शीशे से देखते हैं ? पुस्तकों के अक्षर तो उससे बहुत बड़े-बड़े दीखने लगते हैं।

ज्ञानवीर—नहीं भैया। ये इतने छोटे होते हैं कि वैसे एक आतशी शीशे से भी नहीं दीख सकते। इनको देखने के लिए डाक्टरों के पास एक खास किस्म का शीशा होता है—खुर्दबीन। इससे केवल रोगाणु और दूसरी भी ऐसी ही चीज़ें देखी जाती हैं। तपेदिक आदि रोगों के रोगाणु इतने छोटे होते हैं कि एक सूई की नोक पर ये रोगाणु हज़ारों की गिनती में हो सकते हैं। और रमा ! इस समय वे रोगाणु तुम्हारे खाँसे-छींके बलगम में लाखों की गिनती में होंगे।

रमा—ओह दादा, तभी आप आज सब से कह रहे थे कि सीधे रोगी के मुंह के पास मत बैठो। अपना मुंह कम से कम दो हाथ भर बीमार से दूर रक्खो।

ज्ञानवीर—ठीक है बेटी। और जब तुम खाँसो या छींको तो कभी भी मुंह और नाक के आगे अँगोछा या रूमाल रखना मत भूलो। ऐसा हम सब को भी ध्यान रखना चाहिए। हम खाँस या छींककर रोगों के कीटाणु बहुत दूर तक फेंक सकते हैं। अपने रोग दूसरों को क्यों दें ? दूसरों का भला करने की सामर्थ्य न हो, तो भैया बुरा क्यों करें।

गंगाराम—पर दादा, हम तो ठीक-ठाक हैं। रमा दीदी को तो अँगोछा पास रखना चाहिए। हमें क्या ज़रूरत है ?

ज्ञानवीर—नहीं भैया। खांसी-छींक से कीटाणु फैलते ही हैं। भले ही वे कीटाणु तपेदिक के न हों। पर दूसरे खाँसी-जुकाम के रोगों के तो होंगे ही।

गंगू—ठीक है दादा।

ज्ञानवीर—समझी रमा? और फिर खाँसी-छींक की बलगम जगह-जगह थूकते फिरना एक घोर पाप होगा।

करीमअली—इसमें भी पाप-पुण्य समा गया दादा?

ज्ञानवीर—भाई करीम अली, कोई भी बात बुरी होगी तो वह पाप कही ही जानी चाहिए।

रमा—तो नाली, गढ़े आदि में थूकूँ दादा।

ज्ञानवीर—बिलकुल नहीं। नाली, गढ़ा तो सदा चलकर तुम्हारे पास आएगा नहीं। और तुम भी सदा वहाँ तक जाने की हिम्मत नहीं रख सकतीं। थूकने के लिए तो बहुत जरूरी है कि एक ऊँची दीवारों वाला ढका बरतन हो, जिसमें मोटी तह राख की, मिट्टी की, रेत की या फिनायल के घोल की हो। इसे सदा खाट के पास रक्खो। जब तक खाँसी-बुखार तेज़ है, घूमना-फिरना बिलकुल बन्द। और जब भी थूको, बरतन में थूको। जब यह बरतन साफ करना हो तो अच्छा है थूक जला दी जाय। नहीं तो एक छोटा-सा गढ़ा खोदकर उसमें बलगम सहित राख आदि डालकर ऊपर मिट्टी डालकर गढ़े को बन्द कर दो।

सदा ख्याल रक्खो कि तुम्हारी थूक इधर उधर पड़ी हुई, सूखकर और धूल के साथ उड़कर तुम्हारे ही भाई-बहिनों को बीमार कर सकती है।

सदा याद रक्खो कि जगह-जगह थूकते रहना सब से

भयानक और हानि करने वाली आदत है। रोगों के रोगाणु सूखकर और धूल में मिलकर हवा की सहायता से इधर-उधर बिखरने लगते हैं। साँस से और खाने-पीने की चीज़ों में मिलकर उनसे रोग हो जाने का बहुत डर रहता है।

माणिकलाल—पर दादा, कौन इतना ध्यान करता है। शहरों-गाँवों में सभी थूकते फिरते हैं। यदि आपका कहना ठीक हो तो सब ओर रोग ही रोग फैल जावें।

ज्ञानवीर—भैया माणिक, शहरों में इसीलिए तो रोग ज्यादह हैं। गाँवों की खुली हवा, धूप और खाना-पीना, काम करने की जगह भी रोग से बचने में सहायक होते हैं। रोगाणु एक मुख्य कारण ज़रूर है पर वह भी मौका और मतलब का कमज़ोर आदमी ढूँढ़ता है। यदि समाज में चोरी न चाहें तो जहाँ यह ज़रूरी है कि चोर न हों, वहाँ अपनी सम्भाल भी बहुत ज़रूरी है। बचाओ के किसी पहलू को भी भुलाना नहीं चाहिए। थूकने की गन्दी आदत से रोगाणु शरीर के अन्दर पहुँच तो अवश्य जाते हैं! पर रोग तभी होता है जब कि दूसरे सहायक कारण जमा हो जावें।

प्यारेलाल—दादा, और रोग भी थूक से होते हैं?

ज्ञानवीर—क्यों नहीं? खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएँज़ा, खसरा, खुनाक आदि कई भयानक रोग थूक से होते हैं। और फिर ये रोग तो देखते-देखते ही अपना बुरा असर दिखा देते हैं। सो भैया थूकने से परहेज़ करो। करोगे न?

इस सुझाव को सब ने समझा और हाँ में हाँ मिलाई। तब ज्ञानवीर ने कहा कि हमें हर किसी को समझाना अपना कर्त्तव्य समझना चाहिए।

रमा—ठीक है दादा, दूसरी बातें ?

ज्ञानवीर—किसी को भी अपने मुंह के पास सामने दो तीन-हाथ से नज़दीक मत बैठने दो। तुम्हारा साँस भी रोग फैलाने में कारण बन सकता है। वैसे तो स्वस्थ आदमियों को भी मुँह से मुँह सटा कर नहीं बैठना चाहिए।

धन्ना—क्या सब के साँस में कीटाणु होते हैं ?

ज्ञानवीर—धन्ना भाई, किसको क्या रोग है, यह किसी के माथे पर तो लिखा नहीं होता। और साँस की हवा गन्दी तो होती ही है। बचाओ के लिए यह ध्यान रक्खा जाए तो बुरा भी क्या है ? रमा को तो अवश्य ध्यान रखना ही चाहिए। अगर बैठना ही पड़े तो अंगोछा, रूमाल, पल्ला कुछ न कुछ मुंह के आगे रख लिया। समझे ?

रमा—जी हाँ, दादा।

ज्ञानवीर—रमा ! तुम छोटे कच्ची उम्र के बच्चों को, अपने पास या कमरे में कभी मत आने दो और न खेलने दो। बच्चों में रोगों से बचने की शक्ति कम होती है। तभी तो बच्चों को 'फूल जैसा' कहा जाता है। उनकी रक्षा के लिए तुम्हें परहेज करना ही होगा।

रमा—ठीक है दादा।

ज्ञानवीर—रमा, तुम्हें अब बहुत ही ध्यान रखना होगा कि तुम हवा और धूप को ज्यादह से ज्यादह बरतो। धूप और प्रकाश में लगभग सभी रोगाणुओं को मार भगाने की ताकत होती है। प्रकाश से तो सब बुरे भागते ही हैं। सीधी धूप में सभी रोगाणु लगभग घण्टे भर में मर जाते हैं। सो धूप और प्रकाश सब को लाभ देते हैं।

धूप तथा वायु की कमी पूरी न हो सके तो रमा, किसी का भी हाल तुम जैसा हो जाएगा। किसी का जल्दी, किसी का देर, होगा जरूर। इसलिए धूप और वायु का अधिक से अधिक उपयोग करना चाहिये।

रमा—पर दादा, मुझे तो हवा में बैठने से छींकें, जुकाम लगने में देर नहीं लगती।

ज्ञानवीर—रमा, हवा में बैठने का मतलब यह नहीं कि हवा के झोंकों में बैठा जाए। हवा में बैठने से मेरी मुराद तो यह है कि जहाँ खुली हवा के आने-जाने में कोई रुकावट न हो। मनुष्य खुद झोंके से बचकर बैठे। रमा, जैसे तुम खाट को दरवाज़े और खिड़की से ज़रा हटाकर लगाओ, जिससे सीधा झोंका तो न लगे। मगर कमरे में हवा का आना-जाना बेरोक बना रहे। जब हवा में ठण्डक, गरमी और तेज़ बहाव न हो तो बिलकुल खुले में बैठना तुम्हारे लिए सबसे अच्छा होगा। जितना बम्बई की खोली का अंधेरा और घुटन लिया है, उसका बदला कई गुणा खुले में बैठकर, रह कर देना होगा।

रमा—ठीक है दादा।

ज्ञानवीर—रमा, ध्यान रक्खो कि अपने सोने वाले कमरे में कभी भी अधिक लोगों को सोने या बैठने मत दो।

रमा—ठीक है दादा।

ज्ञानवीर—तुम्हारे लिए रमा, अधिक से अधिक आराम बहुत ही जरूरी है। इस रोग में शरीर की बहुत-सी ताकत खर्च हो जाती है। नई ताकत आती नहीं। मनुष्य इतनी ताकत बना नहीं पाता जितनी खर्च हो जाती है। सो कंजूस की

तरह ताकत को कम से कम खर्च करने के लिए अधिक से अधिक आराम करो। समझ लो राजा की तरह लेटे-लेटे तुम्हें अपने सारे काम पूरे करवाने हैं। बहुत बोलने से भी थकावट मोल नहीं लेनी। सदा ही थकान से चाहिए बचना है।

रमा—पर, दादा, पड़े रहने से तो भूख लगेगी नहीं।

ज्ञानवीर—रमा, जब तक रोग काफी तेज़ है, खाँसी और बुखार चलता है, तथा थोड़ी मेहनत से ही थकान होने लगती है, तब तक तो पूरा आराम आवश्यक है। हाँ, जब तुम्हारा स्वास्थ्य सुधरने लगे, तब बहुत धीरे-धीरे थोड़ा-थोड़ा करके मेहनत वाले काम शुरू किए जाएँगे।

रमा—बहुत ठीक दादा। ऐसा ही होगा। और क्या ?

ज्ञानवीर—रमा, रोगी का कर्त्तव्य है कि शरीर की रक्षा के लिए और रोग से लड़ने के लिए अधिक से अधिक ताकत देने वाली खुराक खाए।

रमा—पर दादा, भूख तो लगती ही नहीं। खाया क्या जाए ?

ज्ञानवीर—अधिक से अधिक ताकत देने वाली खुराक का मतलब यह नहीं कि अन्धाधुन्ध ताकत देने वाले भोजन खाने शुरू कर दिए जाएँ। भोजन हल्का, जल्दी पचने वाला और थोड़ा-थोड़ा करके लिया जावे। यह खाई हुई खुराक पेट पर बोझा न डाले। पर साथ ही कभी भी रोगी को भूखा रहने की या व्रत करने की जरूरत नहीं। एक बात इस रोग में कभी भूलनी न चाहिए कि अंडे, माँस, ताजी क्रीम, ताजा मक्खन, मीठी दही, दूध, ताजे फल, हरी तरकारियाँ, काड मछली का तेल बहुत ठीक ताकत देने वाले भोजन

हैं। इनको ठीक ढंग से पकाकर व कच्चा जैसी कि ज़रूरत हो खाना चाहिए।

रमा—पर दादा, माँस, मछली, अंडे कौन खाए ?

ज्ञानवीर—रमा, माँस इस रोग में बहुत ही बढ़िया भोजन है। और यदि खाया जाए तो अच्छा नतीजा होता है। परन्तु यदि मन में वहम के कारण या मन के दूसरे ख्यालों के कारण परहेज हो तो वह रोगी इस कमी को कुछ हद तक दही, दूध और पनीर से पूरी कर सकता है।

गंगाराम—ठीक है दादा, पर रोग से लड़ने के लिए यदि माँस खाने का परहेज न ही हो तो अच्छा है। ठीक होने पर फिर छोड़ा जा सकता है या हम यूँ कहें कि माँस को दवाई समझ कर खा लिया जाए।

ज्ञानवीर—बात तो ठीक है। रमा, तो तुम भी समझीं ?

रमा—जी दादा, अब तो आपका ही आसरा ले रही हूँ। जैसा कहें।

ज्ञानवीर—और सुनो, रोगी के कपड़े, चादरें, बिस्तर, रूमाल, अंगोछे आदि घर के दूसरे आदमियों के कपड़ों से अलहदा धोने चाहिएँ। बेहतर है पहले उबालकर अथवा फिनाइल में भिगोकर वस्त्रों के रोगाणुओं को नष्ट कर लें। रोगी के बर्तन अलहदा हों तो बहुत ही उत्तम है, नहीं तो उबालकर साफ कर लेने उत्तम हैं। अलहदा सामान होना किसी के लिए भी शर्म की बात नहीं है। रोग को फैलाने से रोकने के लिए ज़रा सख्ती भी बुरी नहीं। पर इतना हौआ भी न बनाया जावे। यह सब समझी रमा, बर्तन अलहदा, कपड़ों की सफाई अलहदा। इन सब के लिये तैयार हो रमा ?

रमा—बिलकुल दादा । क्यों, क्या मेरे चारों ओर मेरे दुश्मन हैं ? और अगर किसी का भला न हो सके दादा तो फिर बुरा ही क्यों करूँ ? आप सख्त से सख्त भी हुक्म करें तो भी तन-मन से पूरा करूँगी ।

ज्ञानवीर—शाबाश बेटी ! अपने आप को समाज का अंग समझ यदि हर कोई अपना कर्त्तव्य निभाए तो समाज स्वर्ग बन जाए ?

रमा—मेरे लिए और क्या हुक्म है दादा ?

ज्ञानवीर—रमा और रमेश, (गंभीर होकर) इतने निकम्मेपन के से वातावरण में फिसलन के अवसर हो सकते हैं । इसलिए तुम दोनों से प्रतिज्ञा की उम्मीद करता हूँ कि जब तक रमा बिलकुल स्वस्थ न हो जाए तुम दोनों बिलकुल नियम से रहोगे । मेरा मतलब है कि आपस में मिलोगे नहीं ।

रमा की शक्ति बनी रहे, इसके लिए संयम बहुत ही जरूरी है ।

यह सुन रमा ने लाज के मारे सिर नीचे कर लिया और रमेश ने गम्भीरता से प्रतिज्ञा करके इस जरूरी सुझाव को भी मान लिया ।

ज्ञानवीर—शाबाश !

अब देखो भाइयो, आज विचारने योग्य बातें ये हैं—

१. तपेदिक का बड़ा कारण रोगाणु है । थूक की बलगम इसे फैलाती है । इसलिए थूकने की आदत को ठीक करें । जगह-जगह थूकना सब से बुरी आदत है ।

२. रोगी के मुख के सामने नहीं बैठना चाहिए ।

३. बच्चों को रोगी के पास न खेलने दें। बच्चे कमरे में न आएँ तो अच्छा है।

थूक की बलग़म इसे पैदा करती है

फल, मक्खन और मांस का भोजन

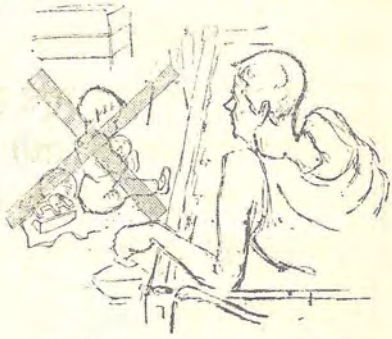

बच्चों को रोगी के पास न खेलने दें

हवा और धूप का उपयोग

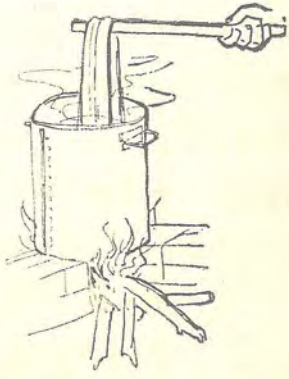

रोगी के कपड़े उबाल कर साफ करें

४. हवा और धूप का पूरा-पूरा लाभ उठाया जाए।

५. रोगी के कमरे में भीड़-भड़क्का कम हो।

६. अधिक से अधिक आराम का इन्तजाम होना चाहिए।

७. अच्छा ताकत देने वाला—माँस, मछली, अण्डे, क्रीम मक्खन, दूध, दही, पनीर, ताजे फल और तरकारियों, का भोजन।

८. कपड़े, बिस्तर अलहदा साफ किए जाएँ। उबाल कर साफ हों।

९. रोगी के बर्तन उबाल कर साफ हों। अलहदा हों तो बहुत अच्छा है।

१०. आखिरी पर बहुत ही जरूरी है नियम का जीवन। रोगी अपने बचाओ के लिए और दूसरे बहिन-भाई रोग को फैलने से रोकने के लिए इन सब पर विचार करें।

जय हिंद !

जनता के कर्त्तव्य

आज आँगन में और भी अधिक रौनक थी। रमा खाट पर लेटी थी। उसके चेहरे पर गम्भीरता थी। रमेश भी पास बैठा सोच में डूबा दीखता था।

सूबेदार साहिब पूछने लगे—

रमा, दिन भर ठीक तो रही ? क्यों भैया रमेश, किस सोच में डूबे हो ?

रमा—दादा, दिन भर अपने कर्तव्यों को मन में बिठाती रही। दादा ! ये बम्बई जा रहे हैं।

ज्ञानवीर—क्यों रमेश ! झगड़ा हो गया क्या ?

रमेश—नहीं तो दादा ! बहुत सोच-विचार कर यह फैसला हम ने किया है। रमा के भली प्रकार रहने के लिए मेरा दूर रहना ही ठीक है। फिर दादा, आप की आज्ञा पालने के लिए रुपया-पैसा भी तो चाहिए। रुपया-पैसा काम के बिना कहाँ पाऊँगा।

ज्ञानवीर—नहीं रमेश ! तुमने कुछ बातें तो ठीक सोचीं और कुछ बातें गलत। कम आमदन का कोई काम तो यहाँ भी दिलवा दूंगा। पर यहाँ रहोगे तो जरूरतें भी कम होंगी। फिर जो सेवा रमा की तुम कर सकोगे वह और कौन करेगा ?

खैर अभी तो पखवाड़ा भर तुम्हें कुछ भी अपने लिए सोच नहीं करनी चाहिए। इस बीच क्या कुछ इन्तजाम हो पाता है या नहीं—यही बात तुम्हारा जाना अथवा न जाना निश्चित

करेगी। आरोग्य मन्दिर के डाक्टर साहिब मेरे गहरे दोस्त हैं। आज उन्हें पत्र लिखकर पूछ-ताछ की है। पत्र आने पर रमा को क्या कुछ डाक्टरी सहायता मिल सकती है, पता चल लाएगा। इस पखवाड़े में मदनपुर निवासी अपनी बहिन के लिए क्या कर सकेंगे, पता चल जाएगा। तभी दोनों का प्रोग्राम पक्का होगा। अच्छा भगवान भली करेंगे।

गंगाराम जी आज क्या बातचीत हो ?

गंगाराम—दादा, कल रमा को कर्त्तव्य बताए थे। आज हम लोगों को भी हमारे कर्त्तव्य सुझावें।

ज्ञानवीर—बात तो पते की कही। हमें मदनपुर एक आदर्श गाँव बनाना है। हमें भी अपने कर्त्तव्यों पर विचार करना ही चाहिये।

वैसे कल की बहुत-सो बातें हमारे लिए भी हैं। जैसे रोग की रोक-थाम के लिए—

१. थू-थू करने की बुरी लत को छोड़ना।

२. ढंग से छींकना, खाँसना और थूकना सीखना।

३. ढंग से धूप-हवा का सेवन करना।

४. सफाई का ध्यान रखना।

५. ढंग का भोजन करना।

६. ढंग से सोना और आराम करना।

७. संयमी जीवन के गुण समझना।

पर इसके अलावा समाज में रहते हमें कुछ और भी करना है।

हम सब समाज रूपी शरीर के अंग हैं। यदि एक अंग अर्थात् शरीर का कोई भाग रोगी होगा तो सारे शरीर को पीड़ा

सहनी पड़ेगी। एक अंग के रोग का असर भी सारे शरीर को ही भुगतना होगा। इसलिए शरीर को चाहिए कि वह अपने किसी अंग की तरफ से लापरवाह न बने। रमा हमारे समाज का अंग है। इसलिये हमें चाहिये कि उसके दुख-दर्द को अपना दुख-दर्द समझें।

हमें जल्दी से जल्दी अपने समाज के इस अंग की सब प्रकार से सहायता करके उसे नीरोग होने में सहायता करनी चाहिए। नहीं तो बुरा परिणाम सभी को कुछ न कुछ भुगतना ही पड़ेगा। सहायता का काम कई प्रकार से हो सकता है।

रोगी के लिए ठीक वातावरण बनाना हम सब के लिए अच्छा है। फिर रोगी की टहल सेवा में हमें आवश्यक सहायता करनी चाहिए।

रोगी खुद तो कोई काम कर नहीं सकता। रोगी के सम्बन्धी भी माली कठिनाई में होते हैं। यदि समाज रोगी को रुपये-पैसे की मदद दे सके तो बहुत ही अच्छा हो।

रोगी को सहायता सीधे भी की जा सकती है। परन्तु अच्छा यही होता है कि इस काम के चिए एक सभा बना ली जावे। यह सभा रोगी और समाज के बीच की एक लड़ी का काम करे।

गंगाराम—क्यों भाइयो, ऐसी सभा बननी चाहिए न? मेरे विचार में तो ज़रूर बननी चाहिए।

ज्ञानवीर—वैसे तो भारत में भी एक संघ पिछले बीस एक साल से काम कर रहा है।

चौधरी—और हम लोगों को पता ही नहीं।

ज्ञानवीर—भारत बड़ा लम्बा-चौड़ा देश है।

इस समय सरकारी सहायता और जनता के सहयोग से बहुत कुछ किया जा रहा है। परन्तु आंकड़े दिखलाते हैं कि भारत में प्रतिवर्ष पचीस लाख तपेदिक के रोगी होते हैं। इनमें से लगभग पाँच लाख रोगी मौत के मुंह में चले जाते हैं। रोगियों की सहायता के लिए रोग के इलाज का बहुत बढ़िया प्रबन्ध नहीं हो पा रहा है। हर एक सौ पचहत्तर रोगियों के पीछे केवल एक रोगी अस्पताल में दाखिला पाकर इलाज का लाभ उठा सकता है। पैसे की कमी के कारण अधिक रोगियों को सहायता देना कठिन होता है।

माणिकलाल—इसमें जनता का सहयोग नहीं है क्या ?

ज्ञानवीर—है क्यों नहीं ? जनता कुछ हद तक धन से मदद दे रही है। इसके लिए एक किस्म के टिकट छपे हुए हैं। उन्हें टी० बी० सील कहते हैं। जो लोग रोग की रोक थाम में मदद करना चाहते हैं, वे इन टिकटों को खरीदते हैं। टिकटों की खरीद से जो पैसा जमा होता है, उसे इस रोग की रोक थाम के चिए खर्च किया जाता है।

माणिकलाल—पर दादा हम लोगों को तो इसका पता तक न था।

ज्ञानवीर—हाँ भाई, प्रचार की तरफ कुछ कम ध्यान है। बिक्री शहरों और कस्बों के अस्पतालों, तक है। प्रचार भी तो आखिर माल से ही होता है।

गंगाराम—दादा, हम इसके लिए क्या करें ?

ज्ञानवीर—हमारा काम तीन हिस्सों में बँटता है।

१. सील खरीद कर केन्द्रीय तपेदिक संघ के हाथ खूब मज़बूत करना।

२. नज़दीक के रोगी भाई-बहिन की सीधे सहायता करना। उसके रहने के लिए जगह, उसकी दवाई और हो सके तो उससे हो सकने योग्य काम उसको देकर सीधी मदद करना।

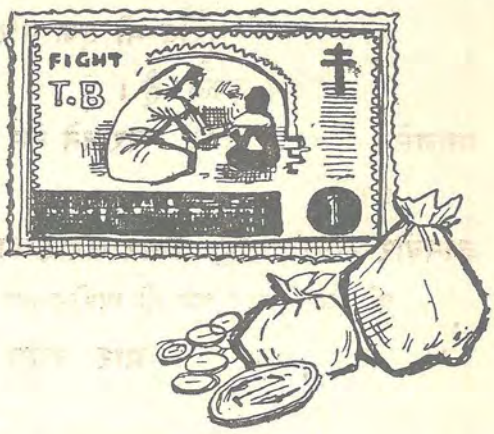

३. सब लोग मिलकर ऐसे काम करें जिससे हम सब बहिन-भाइयों की सेहत अच्छी रहे और रोग रोकने में सहायता मिले। रोग फैलाने में हमारा अनजाने में भी हाथ न हो।

धन्ना—ठीक है दादा, सील कैसे खरीदी जाती है।

ज्ञानवीर—वैसे तो सील ज़िला अस्पतालों और दवाखानों में बेची जाती है। कभी-कभी अच्छे स्कूलों में भी बिक्री के लिए भेज देते हैं।

करीमअली—दादा, सील से क्या लाभ होता है। सीधे ही रुपए चन्दे में दे दिए।

ज्ञानवीर—करीम भाई, चन्दा भेजने में कोई बुराई नहीं। बहुत से लोग सालाना चन्दा दिया करते हैं। पर सील को खरीदने में भी कुछ लाभ हैं।

१. हमें अपने धन के बदले में रसीद की शकल में सील टिकटें मिलती हैं।

२. गरीब से गरीब भी एक सील खरीद कर अपना सहयोग दे सकता है।

मंगलसेन—दादा, टिकट खरीदने दस मील सिविल अस्पताल जाएँ ?

ज्ञानवीर—नहीं भाई, अगर खरीद का प्रोग्राम बना लें तो सब को अपने घर पर ही खरीद का सुभीता मिल जाएगा।

धन्ना—दादा, रमा बहिन और रमेश भाई के लिए हम लोग क्या करें ?

ज्ञानवीर—यह सवाल तो सामने आना ही था। सब से पहले तो रमा के लिए एक खुली हवादार कुटिया बना देनी चाहिए। दूध, दही, मक्खन, अण्डे आदि खाने लायक चीजें अपनी समर्थ के मुताबिक मदद में दी जा सकती हैं। पर देनी बाकायदा चाहिएँ। जैसे मैंने सोचा है कि मैं आधा सेर दूध हर रोज़ खुशी से दे सकूँगा।

करीमअली—और दादा, मैं दो अण्डे रोजाना दे दिया करूँगा। तीन माह तक एक दूधल बकरी दे सकूँगा। रमा की आँखों से कृतज्ञता के आँसू टपकने लगे।

गंगाराम—अरे रमा बेटी, यह क्या ? मैं भी कुछ कहूँ कि न ? सोचता था लगभग आध पाव ताज़ा मक्खन हर तीसरे दिन दे सकूँगा। और कुटिया के लिए लकड़ी जब चाहे गाँव ले ले।

ज्ञानवीर—बहुत खूब। बहुत खूब।

प्यारेलाल—और रमा बहिन। मैं एक कटोरी भर मलाई हर

रोज़ पहुँचाया करूँगा।

धन्ना—मैं तुम्हारे लिये हरी तरकारियाँ रोज लाया करूँगा।

ज्ञानवीर—बहुत बढ़िया, बहुत बढ़िया।

गंगाराम—और दादा, हम लोग रोज़ शाम को कुटिया बनावेंगे।

धन्ना—और भाइयो, मिलकर हमें शिवरात्रि तक इसे ज़रूर पूरा कर देना चाहिए।

ज्ञानवीर—वाह! वाह। अब अगर रमेश को दो रुपए रोज़ पर फार्म में काम मिल जाए तो सोने पर सुहागे की बात हो जाए।

अब केवल रह गया रमा का डाक्टरी इलाज। यह पता आने पर ही मुमकिन होगा। जब तक पता आवे हमें बाकी कामों से निबटना चाहिए। मेरे विचार में कल ही कोशिश शुरू होनी चाहिए।

अच्छा, अब रात हुई।

जय हिन्द!

इलाज

शिवरात्रि का दिन था। मदनपुर में खूब चहल-पहल थी। सूबेदार ज्ञानवीर सिंह के आंगन में आज कीर्तन का इन्तजाम था एक घण्टा कीर्त्तन होता रहा। इस समय सूबेदार साहिब को समाचार मिला कि रमा के लिए कुटिया बनकर तैयार हो गई है। कीर्तन सभा में खुशी की लहर दौड़ गई। सूबेदार साहिब ने मदनपुर निवासियों को इस सफलता पर बधाई दी। साथ ही कहा कि रमा अभी आठ-दस दिन तक अपनी कुटिया में न जा सकेगी। उन्होंने बताया कि अस्पताल से पता आया है कि रमा को परीक्षा के लिए अस्पताल जाना होगा। पूरी परीक्षा के बाद यह फैसला होगा कि रमा को अस्पताल में रखा जाएगा या अपने घर पर ही। जो भी हो, रमा कल ही अस्पताल जाएगी। सवारी का इंतजाम कर लिया गया है। कुछ दिन बाद अस्पताल की परीक्षा का समाचार यहीं से सब को पता चल जायगा।

तीन दिन तक अस्पताल में रह कर रमा की पूरी परीक्षा की गई। जब रमा शाम के समय अस्पताल से लौटी तो कई भाई-बहिन पूछताछ के विचार से जमा हो गये।

गंगाराम जी कहने लगे—दादा, रमा थकी-थकी दीख रही है।

क्या परीक्षा करवाते भी थकावट होती है?

ज्ञानवीर—हां भैया, कई एक परीक्षाएँ सिलसिलेवार की जाती हैं। जैसे एक्सरे परीक्षा, थूक परीक्षा, खून परीक्षा, मूत्र परीक्षा,

मल परीक्षा। और रोग रोकने की परीक्षा। फिर पूरे शरीर की परीक्षा।

मंगलसेन—दादा, इनमें तो कई नाम मैंने आज ही सुने हैं।

ज्ञानवीर—ठीक है भैया। कोई आम जानकारी की चीज़ तो है ही नहीं। फिर इन सब परीक्षाओं को अच्छे अस्पतालों में ही आसानी से किया जा सकता है। महँगी होने के कारण आम जनता बाहिर के डाक्टरों से कम ही करवा पाती है।

धन्ना—इन से क्या लाभ होता है ?

ज्ञानवीर—भैया, एक्सरे परीक्षा से फेफड़ों में रोग का होना न होना पता चल जाता है। रोग कहाँ तक बढ़ गया है, इस की समझ भी एक्सरे के समझने वालों को एक्सरे फोटो देखकर हो जाती है।

थूक परीक्षा से थूक में आने वाले रोगाणुओं का, पीव का, खून का पता चल जाता है। इससे रोग की हालत का पता चल जाता है।

इसी प्रकार खून की अलहदा-अलहदा की परीक्षाओं से रोग की हालत, रोगी की ताकत और रोग रोकने की ताकत का पता चल जाता है।

मूत्र और मल परीक्षा से हाजमे की ताकत और जिगर,

गुर्दों और आन्तों में होने वाले नुकसों का पता चल जाता है।

सारे शरीर भर के अंगों की परीक्षा कर तसल्ली कर ली जाती है कि रोग का कोई दूसरा रूप छिपे-छिपे मार तो नहीं कर रहा।

अपने आप ऐसी परीक्षाएँ करवाई जाएँ तो सैकड़ों का खर्चा हो जाता।

हमें तीन दिन का समय इसी कारण लग गया कि रमा की कई प्रकार से परीक्षा की गई है।

करीमअली—दादा, हमशीरा के बारे में डाक्टरों ने क्या राय दी है ?

ज्ञानवीर—भाई साहिब, रमा का रोग बढ़ी हुई पहली अवस्था का या शुरू-शुरू की दूसरी अवस्था का समझा जाता है। हमें दुःख है, रमा के लिए अस्पताल में तो कोई जगह खाली नहीं है। इसलिए रमा को घर पर रहकर ही इलाज करवाना होगा।

मंगलसेन—दादा, यह क्या ? अस्पताल में रमा जैसे रोगी का इलाज क्यों न होगा ?

ज्ञानवीर—भैया, यह हमारे बुरे भाग्य हैं कि अस्पतालों में पैसे की कमी के कारण सब रोगियों के लिए स्थान नहीं है। बतलाया था कि भारत में एक सौ पचहत्तर रोगियों के पीछे केवल एक दाखिला पा सकता है। इसलिए केवल बहुत बढ़े हुए रोग वाले रोगियों का या जिन्हें चीर-फाड़ या डाक्टरी देख-रेख में ही दवाई देनी जरूरी होती है, दाखिला मिल पाता है। बाकी तो घर पर ही रहते हैं।

मंगलसेन—यह तो बहुत बुरी बात हुई। रोगी इलाज करवाने

को भी तरसें। नासमझी में बहुत हानि भी हो सकती है।

ज्ञानवीर—ठीक है भाई। नासमझों और नादानों को नुकसान सब जगह उठाना पड़ता है। वैसे वे बहुत प्रेम से, पूरी-पूरी हिदायतें देकर, दवाई समझाकर भेजते हैं।

रमा को बड़ी अच्छी तरह समझा दिया गया है और हर चार हफ्ते के बाद, रमा को परीक्षा के लिए जाना होगा। वैसे रमा हम सब में हुई बातचीत से पहले ही बड़ी समझदार बन चुकी थी। दवाई भी दे दी गई है। रमेश को हर आठवें दिन दवाई लेने अस्पताल जाना पड़ेगा।

प्यारेलाल—दादा, रमेश भाईको तो बड़ी तकलीफ हुआ करेगी।

रमेश—नहीं भाई, यह तो मामूली बात है। रमा किसी तरह ठीक हो जाय सही।

ज्ञानवीर—होगी, जरूर होगी। तुम बिलकुल चिन्ता न करो।

करीमअली—दादा, डाक्टर साहिब ने रमा को आखिर क्या हिदायतें दीं।

ज्ञानवीर—बातें तो लगभग वही बताईं जो हम जान चुके हैं। हां, कहने का ढंग अपना है।

मंगलसेन—आखिर क्या कहा दादा?

ज्ञानवीर—बड़े डाक्टर साहिब ने बतलाया कि रमा के लिए चार मोटी दवाइयाँ हैं।

१. आराम यह सबसे बड़ी दवाई है। इसके सामने बाकी सब दवाइयाँ निचले दर्जे की हैं। आराम होगा तो बिना किसी दूसरी दवाई के भी सेहत बन जायेगी और आराम के न रहते बाकी सब इलाजों का असर न होगा। दवाइयाँ फिजूल चली जायँगी।

२. भोजन अच्छा, जल्दी हजम होने वाला होना चाहिए और हर दो-दो, तीन-तीन घण्टे बाद सोच-समझकर लेते जाना होगा। भूखे रहने की कभी कोशिश न करनी होगी। जैसे कि कहा था कि अण्डे, माँस, मछली, क्रीम, मक्खन, फल-तरकारियाँ लेनी अच्छी होंगी। बहुत भूनकर या तलकर पकाने से भोजन की ताकत खत्म कर लेना अच्छा नहीं।

३. धूप और हवा। ताजी हवा और धूप किसी भी रोग को भगाने के बहुत बढ़िया तरीके हैं। इस मुफ्त की दवाई के लिए जगत-पिता का धन्यवाद करो। जो इनका पूरा लाभ नहीं उठाता वह निरा मूर्ख है।

४. डाक्टरी नुस्खे की दवाइयाँ हैं। इनमें भी काड मछली का तेल, बना और गाढ़ा किया माँस-रस आदि असल में तो भोजन ही है। पर ये रोगी को दवाई की तरह दिये जाते हैं।

मंगलसेन—दादा, अब रमा बहन अपनी कुटिया में कब तक जावेगी ?

ज्ञानवीर—कल कुटिया देखकर फैसला करूँगा। मैं नहीं चाहता कि रमा पर कुटिया के गीले होने का कोई असर हो। मेरे ख्याल में आठ दिन लग ही जायँगे।

रमेश—दादा, अब मेरे बारे में क्या आज्ञा है ? बम्बई का क्या सोचूं।

ज्ञानवीर—रमेश भैया, रोगी की ठीक सेवा भी इलाज का एक भाग है। इसलिए मेरे विचार में तो तुम्हारा गाँव में रहना ही जरूरी है। यहाँ के दो रुपये रोजाना भी मेरे विचार में बम्बई की अच्छी आमदन से मुझे अच्छे दीखते हैं। मुझे तो दिन भर की सेवा के लिए अभी चिन्ता है।

जब तुम काम पर होगे तो रमा की देख-रेख तो किसी को करनी होगी। मैं तो इसके लिए बहिन-बेटियों से प्रार्थना करने ही वाला था।

कमला—दादा, हम चार बहिनों ने—मेरा मतलब सीता, मालती गंगादेई और अपने आप से है। दो-दो घन्टे बाँट कर रमा के पास बैठने और देख-रेख करने का फैसला किया हुआ है। बस, कुटिया में जाते ही यह प्रोग्राम शुरू हो जाना था। इससे अधिक जो आज्ञा हो कहो दादा।

ज्ञानवीर—बहुत खूब। बहुत बढ़िया। मेरी एक बड़ी चिन्ता दूर हुई। अब मैं गिरधारी और बुद्धुआ को कुटिया के पास फूलों की कुछ क्यारियाँ लगाने के लिए कहूँगा। इस से मन-बहलाव भी होगा। पर यह बाद की बात है।

रमा, अब महीना भर कोशिश से सावधान रहकर सब कुछ करो। अपनी ओर से कोई गफलत न करना। आशा करता हूँ महीने के अंदर-अंदर ही तुम बहुत कुछ ठीक हो जाओगी।

रोग पर विजय

तीन महीने बाद की बात है।

मासिक परीक्षा करवाकर, रमा सूबेदार साहिब के साथ अस्पताल से लौटी थी। आंगन में बैठक जम गई थी।

रमा को अब घूमने-फिरने की छूट मिल चुकी थी। उसका चेहरा भर गया था। दिन भर की थकावट के बाद भी खुश और चुस्त दिखती थी। जिसने रमा को बीमार न देखा होता वह कभी नहीं कह सकता था कि रमा तपेदिक से बीमार रही है।

गंगाराम जी पूछने लगे—सूबेदार दादा, क्या कहा अब डाक्टर साहिब ने ? रमा बेटी, अब कहो, कब हलवा-पूरी मिलने वाली है गांव को ? मेरे पेट में तो हलवा-पूरी के लिए गुदगुदी हो रही है।

रमा—आप बड़े-बूढ़ों के आशीर्वाद से और भाई-बहिनों की मेहनत से मैं भली-चंगी हो गई हूँ। डाक्टर साहब कहते थे कि इन तीन महीनों में मुझे बहुत ही लाभ हुआ है।

फिर सिर झुकाए आंखें गीली किए कहा। मुझे जब भी आज्ञा होगी, भोज तैयार कर दूँगी।

धन्ना—दादा, डाक्टर साहिब की अब क्या राय है ?

ज्ञानवीर—भैया, डाक्टर साहिब कहते थे कि अस्पताल के बाहिर के रोगियों में रमा का इतनी जल्दी ठीक होना एक बड़ी सफलता है। इस सफलता में जहां रमा की अपनी तपस्या की झलक है वहाँ गाँव के भाई-बहिनों की मेहनत का भी रंग दिखता है। किसी ने भी कम कोशिश नहीं की। गांव

के सभी बहिन-भाई, धन्यवाद के योग्य हैं।

धन्ना—दादा, इसमें हम लोगों का सहयोग तो मामूली है। असली काम तो आपका है।

ज्ञानवीर—धन्ना भाई, मेरी बात गलत न समझना। यह सब आप लोगों के मेल का ही मीठा फल है। मेल और मेहनत से दुनियाँ में क्या नहीं मिल सकता ? हां, रमा बेटी, अब डाक्टर साहिब और मेरी नसीहतों की तरफ ध्यान देने की और भी ज्यादह जरूरत है। शरीर जब एक बार नुक्स वाला हो जाए तो ठीक हो जाने पर भी बिलकुल पहले जैसा नहीं हो पाता। इसलिए जरा भी बदपरहेजी से, रत्ती भर भी गफलत से बचने की बहुत ज्यादह जरूरत है।

मंगलसेन—दादा, अब डाक्टर साहिब क्या फरमाते हैं ?

ज्ञानवीर—वैसे तो मोटी-मोटी हिदायतें वही हैं। साथ-साथ काम करने की ताकत बढ़ाने के लिए कुछ न कुछ करते रहने की सलाह दी है।

पर इसमें सोचने की बात यह है कि रमा किस काम में लगाई जाए ? काम ऐसा होना चाहिए जिससे ताकत का फिजूल खर्च न हो और मन भी लगा रहे।

करीमअली—सच पूछा जाये, तो दादा, काम के बिना मनुष्य मनुष्य ही नहीं दिखता। शायद इसीलिए बेकार का शैतान से मिलान किया गया है और इसीलिए कहते हैं कि "बेकार से बेगार भली"।

दादा, एक काम तो तैयार हो गया है। बकरी की सेवा। याद होगा, मैंने तीन माह पहले एक दूधल बकरी देने का वायदा, किया था। वह बकरी अब देने योग्य हो गई है। क्यों दादा,

ठीक है ?

क्यों रमा, तुम्हें भी पसन्द है कि नहीं ? "सेवा की सेवा और मुफ्त की मेवा" या ऐसा कहें कि "काम का काम और मुफ्त का इनाम"। रमा बेटी, अब तो "सेवा किये जा, और दूध पिये जा" घूमना-फिरना भी खूब हो जाया करेगा।

रमा—जैसा कहोगे चाचा जान। वैसा ही करूँगी।

ज्ञानवीर—ठीक है भाई करीमअली।

कमला—दादा, हम बहिनों ने सोचा है कि दोपहर को दो-चार घड़ी चरखा चलाया करेंगी। कैसा रहेगा दादा ?

ज्ञानवीर—ठीक है, बेटी। यह भी अच्छा हल्का काम है। पर बेटी, मेरा मतलब सिर्फ तन और हाथों को काम में लगाए रहने से ही हल नहीं होता। मैं चाहता हूँ, ऐसे हल्के काम से कुछ थोड़ी आमदन भी हो जाया करे। कुछ रमेश भाई का बोझ भी हल्का हो।

रमेश—दादा, मुझे अपना बोझ हल्का करवाने की जरूरत नहीं, परमात्मा ताकत दें कि मैं अपना काम निभाए जाऊँ।

ज्ञानवीर—पर जो मजा फल वाले काम में आता है, बिन फल वाले में नहीं। फिर काम चाहे चरखे का ही हो, आमदन जरा ढंग की होने लगे तो अच्छा है ही। आजकल एक ऐसा बढ़िया चरखा बनाया गया है। वह आदमी की काम की ताकत को चार गुणा तक बढ़ा देता है। जब उसी मेहनत से चार गुणा फल मिले तो किसे बुरा लगेगा। सो बेटी, ऐसा प्रबन्ध किया जायेगा कि अम्बर-चरखा तुम्हें मिल जाये।

करीमअली—ऐसा चरखा तो हर घर में होना चाहिये।

ज्ञानवीर---बहिनो, भाइयो और बेटियो ! रमा के सेहत पाने से और साथ में मदनपुर में हो जाने वाले सुधारों के कारण मदनपुर ने उन्नति की तरफ एक कदम और बढ़ाया है।

आपने तपेदिक का रूप जाना।

तपेदिक के कारण जाने।

तपेदिक से रमा को बचाने के ठीक उपाय जाने।

तपेदिक से खुद बचने के ढंग समझे----

और आज तपेदिक के रोगी को ठीक होने के बाद हल्के काम सुझाने में भी कसर नहीं छोड़ी।

मुझे अपने गाँव और भाइयों --बहिनों पर पूरा भरोसा है कि वे हमेशा इसी प्रकार कदम से कदम मिला कर चलेंगे।

रमा बेटी, मैं तुम से भी उम्मीद करता हूँ कि तुम तपस्या के जीवन को कम से कम साल भर चालू रक्खोगी।

मदनपुर के लिए रमा का स्वस्थ होना एक मान है, एक फख्र है। सबको बधाई !

आओ हम इसी प्रकार सुख की सोचें, सुख की करें, और सुख से जियें।

जय हिन्द !